कविताएँ

शील

राजस्थान साहित्य अकादमी (संगम)
उदयपुर

प्रकाशक :
राजस्थान साहित्य अकादमी, (संगम) उदयपुर

मुद्रक :
जगन्नाथ यादव, केशव आर्ट प्रिन्टर्स
हाथी भाटा, अजमेर

प्रथम संस्करण १९६७
मूल्य : रु० ४·०० पैसे

प्रकाशकीय

हिन्दी के जिन कवियों में आधुनिक काव्य-बोध अभिव्यक्त होता है, उनमें राजस्थान के भी अनेक कवियों का नाम लिया जा सकता है। हिन्दी नयी कविता में जो आयातित अयथार्थ विचारों, अनुभूतियों व अभिव्यक्ति से बिल्कुल अलग, लेकिन अपनी मिट्टी व अपने परिवेश से जुड़ा हुआ, जीवन्त दिखाई पड़ता है, उसके सृजेताओं में राजस्थान के अनेक हस्ताक्षर हैं। 'शील' भी उनमे से एक हैं। 'शील' आधुनिक कविता के सुपरिचित कवि हैं।

अकादमी की प्रकाशन नीति के इस दूसरे दौर मे, जहाँ हमने गीतकारों को प्रकाशित किया है, वहीं नये कवियों की उपलब्धि भी साहित्यिक पाठकों के सम्मुख लाने का प्रयास किया है।

हमें विश्वास है 'शील' की कविताएँ आधुनिक काव्य-शिल्प और सवेदना को नये आयाम, नये क्षितिज देगी।

समीक्षकों व पाठकों की सम्मति का हम स्वागत करेंगे।

उदयपुर   मंगल सक्सेना

३० जुलाई '६७   सचिव

सृजन के क्षण को

प्रार्थना

किसी फूल पर न जमे रात की कालोंच
कलियाँ उदास न हों, खिलने से पहले
प्यासा झरे न कोई पात
बेल किसी द्वार की, अनफूली न मुरझाये

इतनी नीरव न हो जाय धूप,
चलते हुए डर लगे
इतनी ठण्डी न हो चाँदनी
रात भर आँख न लगे
इतना, बस इतना ही देना दाता,

तेरी इस दुनिया में,
कोई छिप कर न रोये
हँसता जगे, भूखा न सोये
जीवित है जो,
मरा हुआ-सा न दीखे।



सुबह

दस कविताएँ

•

अक्षय आलोक बूँद
जहाँ कहीं गिरती है
धरती पर एक फूल खिलता है ।
जन्म लेता है, गाय की कोख से, उछलता हुआ बछड़ा
बूढ़ी आत्माएँ
बदलने लगती हैं परिवेश
मांओं की गोदियों में,
पगुआये शिशु मचलने लगते हैं
बस इसी तरह
प्रलय के बाद नव-निर्माण होता है
इसी तरह ईश्वर,
सबके बीच आता है ।

•

•

उथल आई है,
प्रलय के बाद डूबी धरती

वायु समेटती जा रही है भूरा कोहरा
पट गये हैं रक्त-कुसुमों से घने जंगल
उड़ती हुई बस्तियों में
होने लगा फिर शोर
राख से ढका आसमान,
भर गया है लाल लपटों से।

•

•

बैठे थे सब योद्धा,
नेतृत्वहीन हतप्रभ, खोये आत्म-विश्वास
हाथ पर हाथ धरे,
नत शीष, भविष्य की चिन्ता में

तभी आया वह स्वर्ण-रथ हांकता
जाग्रति का बिगुल बजाता
ललकारते हुए सबके निष्क्रिय इरादे
उसने अपना रक्त-ध्वज हवा में उछाल दिया
मुर्दे, सब दौड़ पड़े पीछे
करते हुए जय-जयकार।

•

•

कितना चुपचाप,
बदलता जा रहा है दृश्य
परछाइयाँ सोई हुई, खोल रही हैं मिंजी पलकें
फूल पत्ते, सुन सुन,
जग रहे हैं, चहचहाटें
पंखेरुओं में लगी है होड़ दूर जाने की
छा रही है मेरे चारों ओर,
धूम्र कोहरे-सी सुवास
शब्दहीन नीरव पदचापों से कोई
आता जा रहा है, पास···पास
फिर फिर दूर से आ रहा है स्वर
छेड़ा है किसी ने,
मुझे देख मल्हार
हो गया है मुझे किसी से प्यार।
कितना चुपचाप।

•

•

दर्पण में,
वह मुँह फँसा हँस रहा था
किलकार रहे थे शिशु आँगन में
दूध के दाँत किरनें उछीटतीं थीं।
गाय के थनों से मुँह लगा,
पी रहा था बछड़ा दूध,
चुसुर···चुसर

धुनिया···रूई,
जुलाहा बुनने लगा था कपड़ा
घर से बाहर
गाँव पगडण्डियों पर,
भोंपे, साँई, फकीरों के तम्बूरों पर
गा रहा था, वह,
तन्मय, भोर-गीत।

•

खिड़कियाँ, द्वार खोलो
प्रेम पत्र की तरह फरफरा रही है
बाहर सफेद धूप
दिन अश्वारुढ़ राजकुमार,
खड़ा है, प्रतीक्षा-रत
जो तुम्हें, प्यार करता है। •

सूर्य, खोल रहा है,
हर एक बन्द दरवाजा
पहुँचा रहा है श्मशान,
सड़ते शव बन्द कमरों के

हवा प्रार्थना कर रही है
हताहतों के स्वास्थ्य-लाभ के लिए
गुजर चुका है गाँव
भूलोड़न की आपद घड़ियों से। •

सूर्य रश्मियाँ,
नये धान-कुल्लों-सी उग रही हैं,
जहाँ···तहाँ···
पी, पी, ऊष्म जल तरल

बढ़ रही है फसल गेहूँ की
ओस फूल खिल रहे हैं।
मोतियों की उजास,
उजस रही है चारों ओर। •

•

समुद्र-फेनों-सी, बतखें
बुहारती जल, आकाश
गुजर रही हैं
उड़ रहे हैं गिरे हुए परदे मौसम के
खुल रहे हैं, बन्द दरवाज़े
भोर से पहले,
तालाब, नदियों, तटों पर,
हो रहा है भोर।

•

हवा उछाल रही है पांखो,
इक-इक कर आकाश में,
खोल रही है पिंजरे…
कनी-कनी पी रहे हैं सब उजली धूप
चुगते रश्मिकन
घूम रहे हैं बेपरवाह चौपाये
बगुले
(भोर सपनों से)
उजास रहे हैं, जहाँ तहाँ
गाँव के पोखर, तालाब। •

शाम

छः कविताएँ



उड़ा दूँ पिंजरों में क़ैद पालतू पक्षी
उकेर बाहर बिखेर दूँ,
धरती के अन-उगे, उसीजे बीज
फूली बेलों डालों को,
नंगा कर दूँ ।

खाली कर दूँ, घर के सब भरे हुए बर्तन, डिब्बे, बक्स
दरवाज़े खिड़कियाँ खोल,
सारी हवा, भीतर की बाहर निकाल दूँ
इसी उथल-पुथल से शायद,
कुछ तसल्ली मिले मुझे

अस्पताल के छटपटाते रोगियों को नींद आ जाये
दम तोड़ दे
सड़क पर, छटपटाता, जख्मी कुत्ता
आसमान साफ हो जाये
सूरज की कोई कोर
बाहर निकल आये ।



•

पनचक्की की हुपहुपाती आवाज़
करती है मुझे सबसे अलग
तोड़ती है, ऊपर का आकाश

कन्धों को कोई हथौड़ों से ठोकता है
रीढ़ की हड्डी में मुँह दबा,
फूँकता है ऊपर
दर्द भरे सुर निकालता है, बार-बार बाँसुरी में

अब तो सहा नहीं जाता,
सीने पर भार
देखी नहीं जाती शाम, छटपटाती मौत,
जाने कब घिरेगा अंधेरा ?
दृश्य कब होंगे अदृश्य ?

•

•

पता नहीं,
कब कट गया था कच्चा नाखून
चोट कब लगी थी घुटने में ?
मैं कब कहाँ गिरा था ?

याद आ रही है, श्मशान जाती अर्थी
अपमान किया हुआ मित्र का
उसी शाम…शायद
इरादा बदल कर कोई गया था दूर……

बेवजह क्यों याद आ रहा है
हाथों से थरथरा, गिरकर टूटा हुआ आईना
दिल घबरा रहा है।

•

•

आवाज़ें छोड़ कर मुझे
बंधी चली जाती हैं, पीछे पीछे;
पालतू कुत्तों की तरह, स्वामियों के साथ

पीछे रह जाता है,
मेरे पास, एक खाली एहसास
ग्लानि अदेय करुणाकी
रात का विस्तार
अनजाने अपराधों का
सीने पर भार।

•

•

खोये आत्मविश्वास,
कुत्ते की तरह, भटक रहा हूँ अकेला,
खाली सड़कों पर

बन्द हो गये हैं, मन्दिरों के द्वार
मस्जिदें सुनसान पड़ी हैं
ऊबे हुए पादरी सो गये हैं

धार्मिक प्रवचनों से लौटे निराश लोग
घुस रहे हैं अरराकर,
शराबखानों वैश्यालयों में।

•

•

लौट कर, सब तुम्हारे पास से
मिलते हैं, अपने शत्रुओं से···
स्वीकारते हैं, लज्जानत,
अपने अपराध
करते हैं प्रायश्चित
जल तर्पण के साथ।

•

छोटी कविताएँ

बीस

अनुक्रमणिका

सृजन

अतल समुद्र वीथियों में
उगलती है सीपी,
मोती ऊजरा
आते-जाते
छूती है जब कोई कोर किरन,
तुम्हारी,
मेरे चेहरे को।



एकान्त अनुभव

छोटी-छोटी नावें…कागज की शुभ्र
बहा देता है कोई,
उस पार से
लहरें उठा कर फेंक देती हैं,
कुछ अस्फुट फेनिल भाग
सीपियाँ खुल कर बिखर जाती हैं,
मौन
निस्वर टूट जाता है ।



एकान्त संगीत

जल सतह पर,
सतिये से काढ़ता, नरम पदचापों के
नन्हे दिये बालता,
गुज़र जाता है कोई
वृत्तों लहरों में बिखर जाती है खामोशी
वन्य तट
गुंजरित हो उठता है
संगीत ध्वनियों से ।



आशा

फूल रजनीगंधा का
मह-मह महक रहा है
गर्भवती सहजे मीठा दर्द कोख का,
देख रही है सपना,
भोर होने का



आत्मीय परिचय

मुझसे भी पहले,
जिसने मुझे देखा
फैला दीं जिस अपरिचित ने स्वागत-बाँहें
वक्ष, दर्पण में
समेट लिया प्रतिबिम्ब
कौन था वह,
जो मेरी प्रतीक्षा में
शिशु की तरह सूने घर में बैठा था
निपट अकेला।



संवेदना

सुना नहीं,
जिसका व्यथा-स्वर,
दिन की व्यस्तता, कोलाहल में
शाम हुए बन गया वही प्रार्थना स्वर
करुणा मेरे
एकान्त की
द्रवित मन।



माध्यम

पीठ पीछे सुबह उजली,
आगे संध्या धुंधली है
बीच में मैं
टंगा हूँ खिड़की की तरह
माध्यम हुआ ऋतुओं, वायु का



क्षण-जीवी अस्तित्व

जी चुका आयु
कल फिर माँगूँगा, नया दिन आकाश से,
एक पग धरती,
सिमट, खड़े होने को
उगा-उगा एक बीज
खाकर अन्नज्वाल
पोसूँगा अगला क्षण…
जीऊँगा ।



अन्तर्मुखी

थिर रहता है
कुओं बावड़ियों का बंधा जल
सुरक्षित, आत्मलीन,
अपनी गहराइयों, उपलब्धियों में सन्तुष्ट
आंधी मथती जाती है
तालाब, नदियां, समुद्र



श्राप

एक सजीव दिन
तुम्हारे बिन
गुज़रता है, जैसे यौवन,
भरपूर, बाँझ का,
श्राप । सम्पूर्ण जीवन का ।

•

निवेदन

आत्मा !
सहो मेरी स्वाभाविक दुर्बलताएँ
जीवन पूरा,
रक्त के साथ ठठरी
जैसे हवा सहती है, धूल,
प्रकाश, कोलाहल



ग्रागन्तुक

हवा, सिर्फ हवा ही होती है,
एक अरूप, विरक्त छाया
सुबह···शाम
ग्रौर कोई नहीं होता,
उसके सिवा द्वार पर,
भीतर ग्राने,
बतियाने को ।



भ्रातृत्व

भीतर,
पीटता है, बन्द दरवाजा
अंधेरा, डरे हुए शिशु-सा,
बार-बार पुकारता है…मेरा नाम
मुक्ति का अर्थ
अपूर्ण लगता है।



अनाभूत पीड़ा

मेघाच्छादित धुंधला आकाश
अलसाई हवा
नींद की खुमारी में
पीछे छूट जाते हैं पड़ाव
यात्री, भटकते रह जाते हैं
अपरचित पगडंडियों पर
सारे दिन, रात ।



आशंका

युद्ध-रत सैनिक,
पड़े हैं दम साधे गहरी खाइयों में
परिणामों ने उन्हें,
आतंकित कर दिया है।

ऊपर, यान पक्षियों की भारी उड़ानें
घोल जाती हैं
उनकी साफ आँखों में उदासी
खामोशी ने, कान गुञ्ज कर दिये हैं
गुदगुदाती है,
कभी बीच में कोई बात, हृदय
मुँह खोल हँसने नहीं देती
मृत्यु की दुर्वह आशंका।



दूरदर्शिता

रखली जिन्होंने दिन उगे
तोड़ कर रश्मि कलियाँ…सूर्य गुलदस्तों में
अब जला रहे हैं
दीपक, अंधेरे में…सगन्ध
सुख पा रहे हैं, परिश्रम, दूरदर्शिता का।



अबोध शिशु

जो सह नहीं सकते आग, तपन, सूरज की,
सिंगाड़े की बेल बने
पड़े रहते हैं पानी पोखरों के अंधेरे में
फलते फूलते हैं सिर्फ वहीं
फिर उड़ाते हैं मज़ाक, बड़बोले
दुधमुंहे होठों से
धूप तपते विटपों का।



प्रतिबिम्बत भविष्य

सुबह की पीली धूप में
चौंक जाता है लड़का···अपनी परछाई देखकर
भय से सूख मुर्झा जाता है
उसके होठों का ताजा खिला गुलाब
पिता का झुर्रियों भरा मुख
आँखों में झूल जाता है ।
जंगल में, भटक जाता है, पाँखी



रिक्तमन

खाली पड़ा है पड़ोस का मकान,
कल तक असहनीय था, द्वार द्वार खुलना
हर वक्त घाव की तरह दुखते रहना,
ज़ख्मी पड़ोसियों की
कराहटों चीत्कारों, बेचैनी से नींद मुहाल थी
अब खलता है
उसका सूनापन
अपना यूं निरोग हो खाली हो जाना
नींद नहीं आती
अक्सर रात के सन्नाटे में।



ऊँचाइयाँ

आकाश यात्रा के बीच
अचानक मिल गये मुझे
वे सब अवैध बच्चे, देखने नहीं दिया गया था जिन्हें सूर्य

धर्म-गुरुओं की तरह, वे स्वर्गवासियों को,
उपदेश दे रहे थे ।
वैश्याएँ स्तन-पान करा रही थीं,
नवजात शिशुओं को
गाय, बैल, गधे, घोड़ों, कुत्तों
सबने अभिनन्दन किया मेरा
बार-बार सस्नेह, सादर
अपने स्वामियों की कुशल-क्षेम पूछी ।



विविध

चौबीस विता

अनुक्रमणिका

•

यह केवल दोहराना है

यह केवल दोहराना है
मैं होता हूँ हमेशा फूल का फूल
नाम, मौसम, शब्द
मेरे सब मन्तव्य तुम्हारे द्वारा व्यक्त होते हैं।

तुम द्वार
जो गुज़ारते हो—प्रकाश
जो प्रसारित कर प्रतिच्छायित करते हो
अपरिचित, हम दोनों
छायाओं की तरह साथ-साथ रहते हैं.
मौन अनन्त काल दूरियों तक हमें बांधे रहता है।

मेरे मित्र,
मैं होता हूँ वाद्य
जब तुम गाते हो संगीत भास्कर
विकीरित, तुम्हारी आत्मा का
सुनता नहीं हूँ मैं कहीं भी
तुमसे अलग कोई अपनी ध्वनि
छुई नहीं गई मुझसे कोई रेखा
जो हमें विभाजित करती है।



प्रतीक्षा मेरा मुकुर

प्रतीक्षा, मेरा मुकुर
रूपाकार…क्षण, आत्म-साक्षात्कार का
मेरे मित्र प्रतीक्षा तुम्हारी
मेरी ही प्रतीक्षा होती है

हर चीज़ शहर की
फूल, ओस, आग, मिट्टी और सोना
मोड़ती है मुझे भीतर, अपनी ओर उन्मुख करती है
आगे बढ़ा
पीछे लौटाती है…घर की ओर
मेरे मित्र सन्दर्भ तुम्हारे
मुझे अर्थपूर्ण उपलब्धियों के साथ जोड़ जाते हैं।



जिनको हम खोजते हैं

जिनको हम खोजते हैं
सड़कों, बाज़ारों, रेल्वे-स्टेशनों, रेस्त्राओं में
खाली तांगे में घूमते रहते हैं
आँख फाडे
दुरबीन की तरह, अपने से दूर···पास अनुभव करते हैं,
वे वहीं होते है, भोगते, सम्पर्क सम्बन्ध,
हँसते मुस्काते
साथ चर्चाएँ करते, काफ़ी के घूँटों के साथ बतियाते
और जो होते हैं सदेह पास
वे वहाँ नहीं होते
दे दिये जा चुकते हैं क्षण को

हम केवल, माध्यम होते है
समझाये जा चुकने वाले अर्थों का आशय
ध्वनि, प्रसार
बोले गये शब्दों का।



नियति स्वीकार

हमारी हथलियों में,
कर्म की निश्चित सम्भावनाएँ
मुट्ठियों में अपेक्षाकृत परिणाम बन्द हैं।
हमारे द्वारा जो कुछ भी होता है
उसकी पूर्ति ही हमारी आवश्यकता को प्रमाणित करती है
हम वही छूते, भोगते, स्वीकार करते हैं
जिनको अपने स्वभाव, रुचि, तृष्णा से दे दिये जा चुकते हैं
हमारा कथ्य अनुवाद की तरह होता है
और पृष्ठभूमि में प्रतिध्वनित स्वर हमारे शब्दों, अर्थों से
अलग गूंजता रहता है।
हमारी दृष्टि, सिर्फ उन्ही दृश्यों को देखती पहचानती है
जिनके लिए हम उस क्षण जागरूक चेतनशील बना दिये
जाते हैं
हमारा बोध प्रार्थना के शब्दों की तरह वही शब्द,
वही अर्थ दोहराता है
जो आत्मा पहले निस्वर बोल चुकी होती है

हम उथले पानी में भी डूब सकते हैं
छाँह में भी सूख सकते हैं
अनिवार्यताएँ ही हमें होने न होने से परिचित कराती हैं
हमारी मृत्यु, हमारे भोगे जाने, चुक जाने का परिणाम है।

•

रात्रि विधान

प्रदर्शनी के खाली कक्ष की तरह
सारा शहर खामोश है।
भिन्न-भिन्न आकृतियों, दृश्यों, कल्पनाओं में विभाजित
दृश्य चित्र
अधे लड़कों की तरह सिर झुकाये
धर्मोपदेश सुन रहे हैं।
कल फिर यही लड़के प्राप्त ज्ञान को
संगीत, कला, साहित्य में
करुण, सम्वेदना, पीड़ा, उच्छ्वासों के साथ
प्रसाद की तरह, खुले हाथों, सबको बाँटेंगे।
आज अभी जो गूंगे हैं
यही बोलेंगे
असमर्थ पगुआये बच्चे
पतग लूटते मुहल्लों, बस्तियों में दौड़ेंगे
अभी के नगे अभावग्रस्त···अनाथ
कल राजकुमार हो जायेंगे
खोटे सिक्के, हाथों हाथ चलेंगे
आज की घटना, कल इतिहास बन जायेगी
रात की सघन खामोशी
आकाश-व्यापी शोर हो जायेगी।



एक मुट्ठी रोशनी

बस एक मुट्ठी रोशनी
घेरती है जो तुम्हारा पुष्प-मुख
सूर्य है

उतने ही शब्द-बीज
जितने तुम गिराती हो होठों से
मैं उगाता हूँ

सुला देती है हर रात,
थपकियाँ देकर नरम पदचापें
उसके बाद तुम आती हो
बस उतनी नींद
जितनी तुम देती हो सस्वप्न
मेरी आयु है।



आत्म स्वीकार

नकली दाँतों की तरह
वह हँसी बनावटी थी
थोथे थे सब मजाक
कुम्हलाये फूलों की तरह निर्गन्ध
समेट जो तुमने अंजुरी में भर लिये थे मोती
सब झूठे थे।
छिपा हुआ था पीछे मेरा, विकृत चेहरा
वह नकाब था सुन्दर
निर्जीव हाथों ने बनाये थे, सब खिलौने
जो तुम्हें बहुत बहुत पसन्द आये थे
रंग कच्चे, चटक, गहरे दिखाई देने वाले
सच तो यह है
वह सारा दिन मेरी उतरन था
अभिनय किया था मैंने
एक खुश आदमी की जिन्दगी का।



धूप अंजुरी भर !

धूप समेट अंजुरी भर
चढ़ा गया अर्घ्य-सा सूर्य
सिमट गया मैं संकोच, आत्मग्लानि से
अपने शिवत्व, सौन्दर्य से मुँह छिपा गया
क्या देखा उसने मुझमें
कौन-सा देवत्व,
तोली किस तराजू में प्रतिभा
कितने दिन, मास, वर्ष व्यतीत हुए
पूरा कहाँ हो पाया
उठा कहाँ पाया परदा···बीच मे पड़ा
स्वयं को कब देख पाया दर्पण में
उपलब्धियों, अनुभवों को मोल लगा बेच आया
उतरती गई पर्त पर पर्त
छू पाया, कब अन्तिम गहराई
ओ सूर्य,
शिशु-बोलों से पवित्र
चढ़ाये है जो तूने रश्मि-कण
लौटा ले इन्हें
लौटा···ले···।



समर्पण के बाद

समर्पण के बाद भी
क्या रह गया पास
अदेय, जो दुखता है भीतर
क्षार-सा घुलता है

क्या रह गया
जो हो गया असह्य, ये तन, मन
भार लगता है
एक एक दिन, छिन

कौनसा क्षण अभोग्य तुम्हारे साथ का
जो कम नहीं होती उदासी
शाम नहीं कटती
सुबह नहीं होती…।



इतनी ! सूनी रात

इतनी···सूनी रात
कोई नहीं है पास
खिड़कियाँ दरवाज़े बन्द
सब चुप्प, पास खड़े पेड़, पत्ते
एक चुप्पी, झुकाये है
नीचे सारा बोझिल आकाश
दीवारें खड़ी है हठीली
घेरा डाले, गड़ी हुई जमीन में
आले दिवाले,
मेज़, कुर्सियाँ, सब मृत, बेजान
ऐसी भीगी रात
मेरे पास नहीं है किसी से कुछ कहने को बात
अंधेरे का अंधेरे पर प्रहार
ऊँचा उठता पहाड़
इकट्ठी होती गुम्फित खामोशी
इतनी चुप रात
जैसे कब्र का अन्तर्प्रवास
भार, भार···बढ़ता हुआ भार···सीने पर
अबोल, दर्द के सिवा
और कुछ भी नहीं है पास···।

साथी

चुप होने का मतलब,
अकेला, गूंगा होना नहीं होता
एक खाली थैला
लटका हुआ कैमरा
जेब में रखी दुरबीन
स्टेशन के इस कोलाहल में
उछाले हैं निस्वर मैंने कुछ बोल
अपना आशय समझाया
सहयात्रियों का समझा है।
आकाश के नीचे बुना है और एक आकाश
उतारी हैं धूप पर्तें
बदले हैं कपड़े,
अनगिन्न मुसाफिरों से असम्पृक्त, अनजान
चुना है एक साथी
जो सब जगह साथ यात्राएँ करता है।



टूटा दर्पण

बार बार टूट जाता है आईना,
फिर शुरू होता है लम्बा अरसा मातम का,
शोकग्रस्त, कत्ल हो जाने वाले दोस्त की याद का
खो जाती हैं चाबियाँ,
पते, डायरियाँ, अलमारियाँ बन्द पड़ी रहती हैं।
बक्से, मेज, कुर्सियाँ,
जहाँ के तहाँ जड़
बन्द कमरे में घुटकर मरे हुए एक बच्चे की रूह
हर वक्त मेरे सीने पर सवार रहती है।
सारे दिन की दुर्घटनाएँ
अपाहिजों की तरह चीखती चिचियाती
मेरे पास कमरे में इकट्ठी हो जाती हैं
हर शाम, सैंकड़ों अपराधों के जवाब के लिए
मैं कटघरे में खड़ा कर दिया जाता हूँ।



प्यार/आभार

ये, जीवन···अकेला,
अतिरिक्त भीड़ से,
ज़्यादा या कम

छूटा हुआ संग
कटी हुई पतंग···एक दिन
सड़कें, सड़कें,
गलियाँ, गलियाँ
नाम, नाम, नाम, बोर्ड,
मिटते बनते अक्षर
वज़न-मापक मशीन-सा, घिरा हुआ भीड़ से
तटस्थ, जितना लेना,
दे देना उतना

धन्यवाद, कृतज्ञता, आभार,
सबका मूल्य चुका देना
सुबह, शाम, बनाना रास्ता पानी में
काले सफेद, लाल, पीले, रग अलग करना
खोल, छिलके रख
बीज सब दे देना
मेरा घर, दरवाज़े खिड़कियाँ,
सुनसान, अधेरा
उदास प्रकाश···बोझिल किताबें,
मेज, कुर्सियाँ. मेरे साथी, सहचर,
मेरा तुम्हें, प्यार ।
आभार···।
वार, बार



चिन्ता

ये एक दिन
अनुभव गहन, बार बार, गर्भपात
फिर कैसे कटेगी जिन्दगी…?
पड़े पड़े आपरेशन टेबुल पर,
अपरिचित आवाज़ों, शक्लों के बीच,
प्रतिक्षण सहते हुऐ
मृत्यु भय, चीर फाड़, देखते हुए अंग भंग
सुनते छुरी काँटों की चमकती,
तेज़ आवाज़ें,
साँस कब तक चलेगी ?



प्रेम प्रकार

मैंने उसे ताश के खेल को आमन्त्रित किया ।
वह अपनी सबसे ज्यादा खूबसूरत साड़ी
मैं अपने कपड़ों में, शरीक हुआ ।
खेल के दौरान हम आँखों से सुनते,
कानों से देखते,
जुबान से बाजियाँ चलते रहे ।
मैंने उसके तुर्पी बादशाह इक्के से काटे,
उसने मेरी बेगमें
वह मुझे, मैं उसे जीतने की कोशिश में लगा रहा
प्रेम का जीवन
चलता रहा, बस इसी तरह...।
मौसम बदलते रहे ।



पतझर अनुगमन

चुपचाप बदल गया मौसम
खुली खिड़कियों का दृश्य
मुनादी मैंने नहीं सुनी, उसके आने की

फिर भी मुझे आज्ञानुसार आचरण करना था
कानून के तेहद, मकान खाली करने का मेरा वायदा था।
मैंने कपड़े बदले,
क्योंकि सब बेमौज़ू, अनुपयुक्त थे
ताशे की तरह तीखे बजने वाले
मुझे सुनसान बस्तियों से गुज़रना था
एक डायरी और पेन्सिल,
मेरी आवश्यकता थी।
मैंने अपने आप से कहा
तुम्हें अब अकेले रहने, बिना आबादी वाले शहर की
उद्देश्यहीन भटकनों के लिए तैयार रहना चाहिए
भूखा रहना और गुलदस्ते देखना ही
तुम्हारी दिनचर्या होगी।
बिना तर्क मैंने अलमारियों में ताले डाल दिये
दरवाजा छोड़
सड़कों पर आ गया।

•

खेल

मिट गये हैं सब 'मैं' और 'तू' के भेद
अन्तर पड़ोसियों धर्मों का
हो गया है एक
डाले हाथ में हाथ
जोड़े कन्धे, आँखों से आँखें
बच्चे सब कर रहे हैं सफर तय एक साथ
धुल गईं हैं सबके चेहरों से कालोंच
दाग धब्बे
रोशनाई मिट्टी के
सबके चेहरों से बरस रहा है नूर
एक हार के
सब गुँथे हुए फूल
बस मैं ही हूँ तटस्थ
ऐंठा बड़प्पन की शान में



निष्कर्ष

होती हैं छोटी छोटी अनगिन बीमारियाँ
बडी बीमारियों के पीछे
मौसम का अनुकूल न होना
साफ हवा, खुली धूप का अभाव
खिड़की दरवाज़ों का वक्त से न खुलना
ठीक जगह न होना
विवश साथ
हँसना, बोलना, अस्वाभाविक, अनावश्यक
बन्द गलत घड़ियाँ
गैरजरूरी कामों में व्यस्त रहना
बहुत सारी कमज़ोरियाँ
बूढ़ा कर देती है जवानी में
छोटे छोटे भिनगे से कारण
होजाते हैं असाध्य श्राप
गल्तियाँ, महापाप ।



असहाय अस्तित्व

अपने मित्रों, सम्बन्धियों के नाम
मैं सिर्फ मृत्यु के सन्दर्भ में सुनता हूँ ।
हर सुबह डाकिया डाल जाता है
मेरे कमरे में एक मातमी चिट्ठी
मेरा इन्तज़ार खत्म हो जाता है ।
मैं सह नहीं सकता, रोज रोज़
दोपहर और रात
खाने, घूमने का, अकेलापन
मैं तैयार होता हूँ
खबरें चुनता हूँ
और वक्त बदल दिया जाता है ।
कितना अजीब लगता है
हर रोज़ निर्धारित प्रोग्रामों का बदला जाना
कपड़े पहन कर उतारना
जूते छोड़, नगे पाँव, बीमारों की तरह, अकेला चारपाई
पर पड़ जाना
मेरे सिवा इस शासकीय व्यवस्था को
और कौन क्षमा करता रह सकता है ।
एन उत्तेजना के क्षण
बिजली का चला जाना किसे अच्छा लगेगा ?



भीड़ और मैं

भीड़ जनपथ की
कोलाहल के परदों के पीछे छुपा लेती है मेरा चेहरा
आवाज़ आंधियों में खो जाती है
तब मैं साहस नहीं खोता
चीखता चिल्लाता, कुछ नहीं हूँ
सिर्फ भीड़ से कुछ अलग हट कर
शैतान लड़के की तरह छुपकर
चौराहे पर एक पटाखा छोड देता हूँ
जो सबको एक बार चौंका दे
चिन्तित करदे
डाल देता हूँ बीच सड़क पर ऐसी कँटीली झाड़ी
जिसमें सबका उलझना मुमकिन हो
इस तरह हल होती है मेरी समस्या
तटस्थता सबका अंग बन जाती है
पोस्टर की तरह सबकी उत्सुकता का केन्द्र हो जाता हूँ।

•

वसन्त अनुभव

एक दिन और
सिलसिलेवार
दरवाज़ों में एक और दरवाज़ा
घिचपिच धुंधियाई बस्ती की एक और गली
सिर्फ कुछ स्कूली लौंडों ने
पहन लिये हैं वासन्ती कपड़े
टाँग दी हैं दरवाज़ों पर बन्दनवारें
ज़िद्दी लड़कियाँ बाँध आई हैं पीले रिबन
माली बैठे हैं सुस्त उदास
सजाये गुलदस्ते सड़कों पर
शहर से बाहर प्रतीक्षित हैं कदली, बकुल, गुलाब
दह दह झह रहा है पलाश
सबकी नज़रों से अनजान
ढल रही हैं जवानियाँ, सैकड़ों कुँआरी कन्याओं की
आकाश के ऊपर सतह पर
घुमड़ रहा है एक वाष्प संगीत
एक बादल भरा हुआ लबालब
आतुर है नीचे बरस पड़ने को
धूप उष्ण समोये कोलाहल हजारहा आँधियों का
पीट रही है नीचे
धरती का बंद दरवाज़ा

•

ऊब

दिन शुरू होते ही
मेरा इन्तज़ार खत्म हो जाता है ।
कल आये पत्र, निमन्त्रण, सूचनाएँ
शादियों, मृत्यु-सहभोज की
सब व्यर्थ हो जाती हैं ।

नाई भूल जाता है चेहरे पर ज़ख्म बनाना
भौंहें काटना
हर बार खतरा टल जाता है
और मैं साफ बच जाता हूँ ।
लोग हर मुश्किल का समाधान खोज लेते हैं
मोटर, ट्रकों, रेलगाड़ियों के नीचे लेट जाते हैं
(जैसे थकान उतार रहे हों)

मैं हार्न बजाकर आगाह कर दिया जाता हूँ
मेरी सारी योजनाएँ, सम्भावनाएँ, निष्फल हो जाती हैं।
सौदा खरीदते वक्त कभी सिक्के खोटे नहीं निकलते
न कभी बाज़ार बन्द मिलता है
जिम्मेदारी और ज्यादा बोझिल हो जाती हैं।
अब मैं डरने लगा हूँ अपने कपड़ों से
जो चिपक कर मेरी खाल बन गये है।
लोग बेखबर सो रहे होते हैं
जब मै बम छोड़ने का इरादा करता हूँ
बच्चे प्रेम से मेरा नाम पुकारने लगते हैं
जब मैं उनकी जीभ काटने को छुरा निकालता हूँ।



मैं अपेक्षाएं करता हूँ

मैं अपेक्षाएँ करता हूँ
यही है मेरा अभाव, अपूर्णता
एक खाली कुर्सी की तरह
निरन्तर प्रतीक्षारत रहना
वक्त की तरह, घड़ी के काँटों के साथ
बढ़ना गुज़रना नहीं
घण्टे की तरह हर प्रतिघात का इन्तज़ार करना
सोचता हूँ इस पराश्रित जीवन से
मर जाना कहीं अच्छा है।

फिर डरता हूँ मै सुबह न होने से
रात दिन, धूप छाँह, समुद्र नदियों के व्यर्थ हो जाने से।
फूल पत्ते, बाग़ बग़ीचों के उजड़ने
झरनों के सूख जाने की आशंका से
मैं ख़ुद को दिया हुआ
वापस माँग लेता हूँ।
गेंद की तरह फेंका हुआ ऊपर
इन्तज़ार करता हूँ नीचे लौटने का
उठा लेता हूँ बिना शर्म
फेंका हुआ अपना भिक्षा-पात्र
होटलों, कैफ़ों, शराबघरों पर जाकर
गुहार लगाता हूँ।
ऊँट की तरह मार के डर से
अखबारों के पन्नों में मुँह गाड़ लेता हूँ।



जब मैं आदमी नहीं होता

उस वक्त जब मैं आदमी नही होता
कुत्ता, गधा, घोड़ा, तोता होता हूँ
सब लोग मेरे मित्र सम्बन्धी शुभचिन्तक होते हैं।
प्रशंसा, हर बन्द घर और गली मे
मेरे लिए दरवाजा खोल देती है।
दुकानें, सिर्फ उन्ही को गालियाँ नहीं देतीं
जो बोर्ड, विज्ञापन, इश्तिहार पढ़ते हैं।
गिरे हुए परदों, गुप्त कमरों की खिड़कियों से झाँकते हुए
संस्थाएँ भीतर का सारा कूड़ा
आगन्तुकों के ऊपर डाल देती हैं।
स्कूल, कालेज सम्मान में पदक-पुरस्कार प्रदान करते हैं
किताबें चिड़चिड़ी हो जाती हैं
जब उनके शब्दों, आशयों को
अनाज की तरह छाना जाता है।
मैं श्मशान से निकाल दिया जाऊँगा
अगर शव के पास बैठ कर नहीं रोऊँगा
लोग मुझे गालियाँ देंगे
मेरे चरित्र, नीयत पर शक करेंगे
अगर वक्ताओं से, मैं उनके भाषण का अर्थ पूछूंगा।

